प्रवचन नं. ३३ गाथा-९-१० ता. १४-७-७८ शुक्रवार अषाढ सुदी-८ सं.२५०४

समयसार ! ९ और १० गाथा, टीका है न इसकी। प्रथम, `**जो श्रुत से केवल शुद्धात्मा को जानते है वे श्रुतकेवली है**' क्या कहा ? जो अंदर श्रुतज्ञान, भावश्रुतज्ञान जिसमें राग नहीं, स्वस्वरूप को जाननेवाला भावश्रुतज्ञान, इस भावश्रुतज्ञान से आत्मा को जानते हैं वह श्रुतकेवली परमार्थ से है। क्योंकि जिसने पूरा आत्मा जाना, भावश्रुत, द्रव्यश्रुत नहीं, विकल्प नहीं, राग या शुभादि (भाव), राग तो अंधकार है राग में जानने की शक्ति नहीं, जानने की शक्ति जो राग से भिन्न, जो स्वरूप को पकड़ने (वाला) भावश्रुतज्ञान वर्तमान पर्याय, वर्तमान भावश्रुतज्ञान निर्मल पर्याय, राग बिना की ऐसे निर्मल श्रुतज्ञान से आत्मा को सीधा जानता है, यह तो निश्चय समकिति अर्थात कि निश्चय श्रुतकेवली। आहाहाहा ! निमित्त से जानने में आता है - ऐसा भी नहीं, व्यवहार श्रुतज्ञान शब्दों से जानने में आता है - ऐसा भी नहीं, इसीप्रकार दया, दान, व्रत, भक्तिरूप

राग की मंदता के भाव शुभभाव से आत्मा जानने में आये - ऐसा नहीं। आहाहाहा ! अंतर में भावश्रुतज्ञान द्वारा अंतर्मुख होकर (जानते है) अपूर्व बात है। अनंतकाल से कभी किया नहीं इसने।

यहाँ दो प्रकार से वर्णन करेंगे। निश्चयश्रुतकेवली और व्यवहारश्रुतकेवली, सत् सच्चाश्रुतकेवली और उपचार कथन के श्रुतकेवली, जो सच्चे श्रुतकेवली उन्हें कहते है कि ***जिसने अंदर भावश्रुत द्वारा द्रव्यश्रुत के ज्ञान द्वारा, भावार्थ में - ऐसा अवश्य लिया है परंतु द्रव्यश्रुत तो निमित्त है और भावश्रुत तो अपने से हुआ है, यह भावश्रुत का वर्तमान ज्ञान की पर्याय से, द्रव्य अर्थात ज्ञायकभाव को जाने यही सच्चा निश्चय श्रुतकेवली है।*** उसको जो जानना था यह जान लिया। आहाहा ! बारह अंगों में जो कहने की बात थी, अनुभूति करने की, कि ज्ञान द्वारा आत्मा को, ***वर्तमानज्ञान द्वारा आत्मा को सीधा पकड़ना, यह अनुभूति इसमें आत्मा का ज्ञान आया, यहाँ परमार्थ से श्रुत में पूर्ण हुआ यह, क्योंकि श्रुत को जाननेवाला ज्ञान यह तो त्रिकाली स्वरूप है उसे जिसने श्रुतज्ञान द्वारा जाना यह तो परमार्थ से श्रुतकेवली हो गया।*** आहाहा !

नरक का नारकी हो कि पशु हो, तिर्यंच भी यह अंतर के भाव (श्रुत) ज्ञान द्वारा आत्मा को जैसा अनुभवे जाने, तब यह श्रुतकेवली है सभी जाना उसने। आहाहा ! उसने सभी जाना आहाहा ! उसने सभी जाना `जाननेवाले को जाना' उसने सभी जाना, आहाहाहाहा ! सूक्ष्मबात है भाई ! यह आत्मा जो एक समय में अकेला ज्ञायक भाव जिसमें गुण होने पर भी गुणों का भेद नहीं - ऐसा जो अभेद द्रव्य स्वभाव कि जो भावश्रुत से उसे जाने, उसने परमार्थ से आत्मा को जाना तब परमार्थ से उसको श्रुतकेवली कहा जाता है। आहाहा !

चाहे अन्य शास्त्र का ज्ञान विशेष न हो, समझाना भी कदाचित नहीं आये, आहाहा ! जिसने अंतरज्ञान, राग के विकल्प बिना का जो ज्ञान - ऐसा जो श्रुतभाव उसने भगवान - ऐसा भगवान आत्मा उसको जाने, जाना वह सम्यग्दृष्टि और वह भावश्रुतकेवली। आहाहा ! बाबूलालजी ! छोटा भाई ! - ऐसा मार्ग है बापा ! आहाहा !

जो जानने योग्य वस्तु थी, परमात्मस्वरूप, सर्वोत्कृष्ट ज्ञायकभाव (वह जाना) दोपहर तो आया था न बहुत, अभी आज दोपहर को आयेगा। आहाहा ! जिसमें मुनिपर्याय का लिंग केवली की पर्याय और सिद्धपर्याय भी जिसमें नहीं, त्रिकाली ज्ञायक में नहीं ऐसे ज्ञायक को जिसने वर्तमान भावश्रुत से जाना... आहाहा ! यह सच्चा निश्चय परमार्थश्रुतकेवली है। आहाहाहा ! है ? यह प्रथम पंक्ति हुई, प्रथम प्रथम `तावत्' शब्द है न मूल संस्कृत में है अंतिम `तावत्' यह पहली पंक्ति उसका तावत् अंतिम शब्द

है, संस्कृत में `तावत् परमार्थ' पहली पंक्ति। आहाहा ! समझ में आता है कुछ ? वह तो परमार्थ है। आहाहा ! परम पदार्थ, परमार्थ स्वरूप अपना ध्रुव, अपना इसे जिसने भावश्रुत से जाना यह तो परमार्थ है। यह परमार्थ किसी का करे - ऐसा नहीं हो यह। (लोक में मानते है) पैसा देना किसीकी मदद करना यह परमार्थ काम करते हैं। आहाहा ! परमार्थ तो यह भगवान आत्मा एक समय में पूर्ण... तुम तो गुजराती समझते हो न ? तुम मूल में तो गुजरात के ही हो, बड़े भाई, यह तो ठीक है। आहाहा !

बहुत संक्षेप में पूर्ण स्वरूप... जिसको अल्पज्ञान (होनेपर भी) परंतु भावश्रुत है। जिसको विशेष द्रव्यश्रुत का ज्ञान ही न हो। आहाहाहा ! परंतु जो ज्ञान की दशा, भावश्रुत जिसकी यह पर्याय है उसको जिसने जाना। आहाहा ! यह परमार्थ से निश्चय सच्चा श्रुतकेवली है। बाबूलालजी ! भैया ऐसी बात है, व्यवहार-व्यवहार तो तुम्हारा कहाँ, भैया ने प्रश्न किया था न ? शुभभाव आता है, धर्मी को भी (अशुभ) से बचने के लिये शुभभाव होता है, परंतु है यह बंध का कारण, धर्मी को भी आत्मज्ञान होने पर भी और अंतर के अनुभव की दृष्टि होने पर भी, उसे अशुभ से बचने (के लिये) शुभभाव आते हैं, परंतु है यह बंध का कारण। मोक्षमार्ग नहीं और मोक्षमार्ग का यह कारण नहीं। आहाहाहा ! अरे ! मनुष्यभव में तो करना तो यह है। जिसमें हित हो, अहित टले। आहाहाहा ! शेष सभी बेकार है। आहा ! शेठ ! यह एक बात हुई।

भावश्रुतज्ञान समझे न ? उसमें भावश्रुतज्ञान से आत्मा जाने यह परमार्थ से यथार्थ से निश्चयश्रुतकेवली और यह परमार्थ है यह। यही वास्तविक चीज है। आहाहाहा ! और जो... यह तुम्हारा प्रश्न आया अब, और जो सभी श्रुतज्ञान को जानता है, सभी श्रुतज्ञान क्यों कहा ? है तो भावश्रुतज्ञान पर्याय इस ज्ञान से ज्ञान में आत्मा जानता है - ऐसा कहना है। इस श्रुतज्ञान से सीधा जानता है यह दूसरी बात, अब यह तो `ज्ञान सो आत्मा' - ऐसा भेद करके समझाना है कि यह ज्ञान इसका संबंध आत्मद्रव्य के साथ है, यह ज्ञान सो आत्मा... इतना भेद करके जो ज्ञान सो आत्मा - ऐसा कहा उस ज्ञान को यहाँ सर्वज्ञान कहा है। आहाहा !

क्योंकि इस सभी को जानने के लिये जाता है, यह ज्ञान की पर्याय सर्व को जानने के लिये है। है ! श्रुतज्ञान वह आत्मा इतना भेद करना है, वह व्यवहार है। परंतु उसको सर्व श्रुत क्यों कहा ? क्योंकि श्रुतज्ञान से यह **`ज्ञान सो आत्मा'** - ऐसा कह कर परमार्थ का उपदेश इसप्रकार चलता (है)। अकेला सीधा परमार्थ का उपदेश हो सकता नहीं। इसलिये उसको जो श्रुतज्ञान है। ज्ञान है वह तो भावश्रुत है, द्रव्यश्रुत की यहाँ बात नहीं। परंतु यहाँ भावश्रुतज्ञान जो हुआ यह ज्ञान आत्मा

को जानता है, यह ज्ञान आत्मा का है, उसका आत्मा के साथ तादात्म्य संबंध है, इतना जो ज्ञान और आत्मा का भेद करके आत्मा को समझाया इसलिये उस ज्ञान को सर्व श्रुत कहा जाता है। क्योंकि वह ज्ञान पूरा भगवान आत्मा तीनलोक का नाथ पूर्ण उसे जाननेवाला यह ज्ञान है और इस ज्ञान का आत्मा के साथ तादात्म्य संबंध है।

कांतिभाई ! यह तुम्हारा प्रश्न अब यहाँ आया, प्लेन में नौकर थे। १५०० का वेतन (है) ब्रह्मचारी है, बालब्रह्मचारी। छोड़ दी, नौकरी, छोड़ दी। देढ़ हजार का वेतन था मासिक, प्लेन कहलाती न वहाँ हम जाते तब मदद करने आते टोप पहनकर हाँ। रात को प्रश्न किया था न श्रुत का। आहाहा ! यहाँ कहते हैं प्रभु एक बार सुन तो सही ! कि तुम्हारी जो ज्ञान की पर्याय है, स्वरूप का ज्ञान वास्तविक यह ज्ञान, शास्त्र का ज्ञान और पर का ज्ञान यह बात यहाँ नहीं। आहाहा ! ***शास्त्र से भी ज्ञान जो (कहा) हुआ, वह भी स्वयं से हुआ, उसे यहाँ ज्ञान कहने में नहीं आता है। द्रव्यश्रुत को सुनकर हुआ वह ज्ञान भी वास्तविक ज्ञान नहीं। क्योंकि सुनकर के भी जो ज्ञान हुआ है वह स्वयं से (हुआ), परंतु यह परलक्ष्य से ज्ञान हुआ, उसे स्वलक्ष्य करने के लिये वह ज्ञान काम नहीं आये।*** आहाहा !

ऐसा वीतराग मार्ग, आहाहा ! दिगम्बर जैन धर्म सनातन सत्य तीनों काल में कहीं है नहीं अन्य जगह। आहाहा ! ऐसी यह चीज तो देखो उसे सुनने को मिले नहीं। आहाहाहाहा ! दिगम्बर मुनि केवलियों के पथानुगामी, अल्पकाल में, एकादभव में केवलज्ञान लेनेवाले हैं। यह संत जगत को समझाते है। आहाहाहाहा ! पक्ष में बंधकर बैठे है यह, यह बात इसमें नहीं बापू ! आहाहा ! यह तो वस्तु का स्वरूप है। यह जैन कोई संप्रदाय नहीं, जैन कोई पंथ नहीं यह तो वस्तु का स्वरूप है।

जिन सो ही आत्मा, अन्य सो ही कर्म,
यही बचन से समझ ले, जिनप्रवचन का मर्म।
घट घट अंतर जिन वसे, घट घट अंतर जैन,
मत मदिरा के पान सो, मतवाला समझें न। - नाटक समयसार

मतवाला - अपने मत का अभिप्राय अर्थात मूर्छापना, मूर्छा, भगवान जिनस्वरूपी प्रभु ! आहाहा ! ***परमात्मप्रकाश में भाई आता है न ! ८८ गाथा जिसमें भाव लिंग का स्वरूप उपचार से जीव का है। परमार्थ से तो मुनिपना भावलिंग मोक्षमार्ग यह ज्ञायकभाव में नहीं।*** आहाहा ! ***ऐसा ज्ञायक है उसे जिस ज्ञान ने जाना उस ज्ञान ने भावश्रुत को जाना वह तो श्रुतकेवली परमार्थ से है,*** यथार्थ है, सत्यार्थ है, परंतु

जो ज्ञान भावश्रुत ज्ञान द्वारा, यह ज्ञान सो यह आत्मा - ऐसा जो समझाया है क्योंकि ज्ञान और आत्मा का तादात्म्य संबंध है, एकरूप संबंध है। जैसे उष्णता और अग्नि का तत्‌रूप संबंध है। इसीप्रकार यह ज्ञान और आत्मा का तद्रूप तादात्म्य संबंध है। इस कारण कहा कि जो सर्व श्रुतज्ञान को जानता है। सर्वश्रुतज्ञान से आत्मा को जानता है यह अभी यहाँ नहीं, आत्मा को श्रुतज्ञान द्वारा जानते है यह तो निश्चय हुआ।

अब यह आत्मा को जाननेवाला ज्ञान, यह ज्ञान जो है यह सर्व श्रुत को जाननेवाला है यह है ? जो सर्व श्रुतज्ञान को जानता है। आहाहाहा ! ***चाहे वह ज्ञान अल्प हो और ध्रुव को जाने अंदर में, तब वह ज्ञान को भी सर्वश्रुत ज्ञान कहा है।*** समझ में आया ? आहाहाहा ! - ऐसा मार्ग ! पकड़ने में कठिन लगे, दिगम्बर जैन धर्म सनातन अनादि अनंत जिसको गणधरों ने स्वीकारा, इन्द्रों ने सत्कार करके अनुभव किया, इन्द्र एकावतारी एक भव से मोक्ष जानेवाले है शक्रेन्द्र। सौधर्मलोक के बत्तीस लाख विमान, एक एक विमान में असंख्य देव, उसका स्वामी इन्द्र है। भगवान के शास्त्रों में सिद्धांत में - ऐसा कहा है कि अभी (जो) शकेन्द्र है कि वह मनुष्य होकर मोक्ष जानेवाले है। आहाहा ! (इन्द्र) समकिति है। बाबूलालजी ! इन्द्र सौधर्मदेवलोक है, ऊपर पहला मेरुपर्वत ऊपर, (तुरंत) बत्तीसलाख तो विमान है। एक एक विमान में असंख्य देव है। कोई विमान छोटा होगा, शेष बहुत असंख्य है उसका स्वामी है, करोड़ों अप्सरायें है, परंतु अंदर में आहाहा ! यह भावश्रुतज्ञान से आत्मा को जान लिया है। आहाहा ! तब यह कोई वस्तु हमारी नहीं, (अभिप्राय में) मैं इन्द्र नहीं, मैं इन इन्द्राणी का स्वामी नहीं। मैं ३२ लाख विमानों का स्वामी नहीं। आहाहाहा ! हमने तो एक श्रुतज्ञान द्वारा त्रिकाली जो जाना है। आहाहाहा ! भगवान उसे श्रुत केवलीयो, श्रुतकेवली कहते हैं। आहाहा ! ***और उसे यह जाननेवाला जो ज्ञान है, उसे सर्वश्रुत कहकर एवं वह ज्ञान आत्मा का है, आत्मा के साथ संबंध - ऐसा व्यवहार है। इतना भेद करके समझाया (है) यह व्यवहार हुआ।*** आहाहाहा ! दया, दान आदि रूप व्यवहार के व्रत के विकल्प की तो बात रही नहीं।

मात्र जो श्रुतज्ञान जो आत्मा को जाननेवाला ज्ञान, चाहे वह अल्पज्ञान हो परंतु उसको सर्वश्रुत कहा, कारण कि जो जाननेवाला है उस जाननेवाले ज्ञान का उससे संबंध है, यह ज्ञान सो आत्मा है। आहाहाहा ! (श्रोता :- सर्वश्रुत का अर्थ स्वपरप्रकाशक ले सकते हैं ?) यहाँ सर्व अर्थात आत्मा को जाननेवाला ज्ञान वह सर्वश्रुत। आत्मा जो ज्ञान है। यह आत्मा को सीधा जाने यह परमार्थ तो सीधी बात है, अब इस ज्ञान को यहाँ, इस ज्ञान को सर्वश्रुत कहा क्योंकि यह आत्मा को जाननेवाला ज्ञान है। यह ज्ञान और आत्मा दोनों का संबंध है। तादात्म्य तद्‌रूप, इस कारण ज्ञान

को सर्वज्ञान कहा और वह ज्ञान वह श्रुतकेवली है। यह व्यवहार कहा। यह ज्ञान वह श्रुत केवली है, उसे जाने वह ज्ञान श्रुत केवली है। यह व्यवहार कहा। यह ज्ञान वह श्रुतकेवली है उसे जाने उसे श्रुतकेवली कहना यह व्यवहार है और वही ज्ञान आत्मा को जाने उसे निश्चय श्रुतकेवली कहते हैं। आहाहा !

कहो कांतिभाई ! प्रकरण तो जब आये तब स्पष्टीकरण होता है न ? (श्रोता :- सर्व श्रुतज्ञान अतीन्द्रय ज्ञान है ?) हाँ, यह `अतीन्द्रियज्ञान' है यहाँ तो इतना कहना है, कि इस ज्ञान का संबंध आत्मतत्त्व के साथ है। इसलिये वह तादात्म्य संबंध होने से `ज्ञान सो आत्मा' - ऐसा जो भेद करके समझाया उस ज्ञान को व्यवहार श्रुतकेवली कहा जाता है। आहाहा ! नवरंगभाई ऐसी बातें है।

प्रथम १२ गाथाओं में तो पूरे समयसार का संपूर्ण स्वरूप भर दिया है। फिर तेरह (गाथा) से उसका विस्तार है। पहली १२ गाथायें... कुन्दकुन्दाचार्य की गजब रचना और अमृतचन्द्राचार्य की टीका दिगम्बर संत। आहाहा ! अतीन्द्रिय प्रचुर आनंद के वेदन में स्थित हैं उनको यह विकल्प आया और टीका रची गई। फिर भी यह स्वयं - ऐसा कहते हैं कि प्रभु ! इस टीका का मैं रचनेवाला नहीं, हाँ। यह तो शब्दों की रचना हो गई है। आहाहाहा ! मैं तो स्वरूप में आत्मा में हूँ, मैं तो स्वरूपगुप्त हूँ। आहाहा ! जहाँ मैं हूँ वहाँ तो राग ही नहीं। वहाँ पर को समझाने का विकल्प भी नहीं और में जहाँ हूँ और जो हूँ वह टीका के शब्दों को रचे - ऐसा आत्मा नहीं। आहाहाहा ! किंचित् मात्र हमारा कर्तव्य नहीं - ऐसा कहा है। यह टीका के शब्दों की रचना हुई इसमें किंचित् थोड़ा भी हमारा कर्तव्य नहीं (मैं) अकिंचितकर (हूँ)। आहाहाहा ! उसमें वस्तु का स्वरूप है, हो ! परद्रव्य की रचना कौन करे प्रभु ? यह परद्रव्य के रजकण की उस समय वह पर्याय होना हो वह परद्रव्य से होती है। आहाहा !

यहाँ तो यह बड़ा धंधा और व्यापार और उसके सभी (काम) मैं हूँ तब होता है। मैं इसे करता हूँ। बहुत भ्रमणा। यह तुम्हारे शेठ जैसों को धंधा बड़ा हो, सभी बड़े-बड़े आकर बैठें, गादी कहलाती क्या ? दुकान की पीढ़ी ऊपर, यह करो और - ऐसा करो। आहाहा ! कौन करे प्रभु ? परद्रव्य की क्रिया कौन करे नाथ ? आहाहा ! तुम जहाँ हो वहाँ यह करने का स्वरूप है ही नहीं।

अरे ! तुम जहाँ हो वहाँ मोक्षमार्ग की पर्याय भी उस द्रव्य में नहीं। आहाहा ! यह पर्याय में है। आहाहा ! - ऐसा जो स्वभाव बापू ! यह स्वभाव को जाननेवाला ज्ञान, उस ज्ञान को यहाँ सर्व श्रुत कहा जाता है, क्योंकि वह `ज्ञान सो आत्मा' ज्ञान का संबंध, आत्मा के साथ है, ज्ञान का संबंध किसी अनात्मा के साथ है नहीं, इस

ज्ञान का संबंध व्यवहार रत्नत्रय का राग होता है, उसके साथ संबंध नहीं। आहाहाहाहा ! समझ में आया ?

जो भावश्रुतज्ञान है उसके द्वारा सीधा आत्मा को जाने, भेद किये बिना, यह तो सच्चा निश्चय परमार्थ श्रुतकेवली है। परंतु उस पदार्थ को जाननेवाला भावश्रुतज्ञान जो है। जिस ज्ञान का संबंध (निज) आत्मा के साथ है, इसलिये उस ज्ञान को आत्मा कहकर, उस ज्ञान को व्यवहार सर्व श्रुतकेवली कहा जाता है। आहाहाहा ! गजब बात है। आहाहाहा ! ऐसी बात ! यह तो तीर्थंकर के घर की बात है। जिसे गणधर सुनते थे, जिसे एकावतारी, एक भवतारी इन्द्र सुनते थे, यह बात है। आहाहा ! भगवान (सीमंधरनाथ) विराजते हैं, वहाँ से तो यह बात आई है। आहाहाहा !

अभी तो निश्चय और व्यवहार किसको कहना यह बात अभी चलती है। आहाहा ! जो अंतर ज्ञान द्वारा आत्मा का सीधा अनुभव करे यह तो यथार्थ निश्चय परमार्थ श्रुतकेवली, परंतु उस परमार्थ स्वरूप को जाननेवाला ज्ञान, यह ज्ञान उसका (आत्मा) के साथ तादात्म्य संबंध है, वस्तु के साथ यह तो भेद जानकर उस ज्ञान को सर्वश्रुत कहा और उस ज्ञान को व्यवहार कहा वह व्यवहार श्रुतकेवली कहा। आहाहाहाहा ! कहो रतिभाई ! ऐसी बातें है। अब मूलवस्तु में बहुत बदलाव हो गया है। आहाहा ! अभ्यास नहीं न ? अतः कठिन लगे, ऐसी लगे यह बात। वस्तु तो इस प्रकार है और यही परम सत्य है। आहाहा !

`ज्ञान', शास्त्र का ज्ञान नहीं, जो आत्मा का ज्ञान हुआ, यह `ज्ञान सो आत्मा' है इतना भेद करके समझाया है, यह ज्ञान आत्मा को अनुभवता है, यह परमार्थ को कहना इस भेद के बिना समझ सकते नहीं, इसलिये बीच में - ऐसा एक व्यवहार भेद आता है, यह भेद यह कि ज्ञान जो आत्मा को जाननेवाला है, वह ज्ञान आत्मा को जाने - ऐसा संबंध है इसलिये उस ज्ञान को सर्वश्रुत कहकर उसे व्यवहारश्रुत केवली कहा जाता है। आहाहा ! धीरुभाई ! - ऐसा मार्ग है। आहाहा !

अरेरे ! जिसे सुनने को मिला नहीं - ऐसा मनुष्यपना... कहा ना कि परसों तो यह विचार आया था। अरेरे ! अपने मां-बाप को प्यारा कहते है। प्यारी हमारी मां और बाप प्यारा कहते थे। वह कहाँ गये होंगे, यह विचार किया है ? बाबूलालजी ! आहाहा ! तुम - ऐसा कहते हमारी मां, इसप्रकार गोदी में बैठा ले और पालें पोसे। आहाहा ! दोनों पैर लम्बा करके (बैठाकर) संडास कराते, यह दोनों पैर लम्बे करके बैठालते है - ऐसा करते है न, बालक को जंगल, दिशा के लिये पैर पर पैर करके उस छोटे बालक को, आहाहा ! - ऐसा जिन्होंने बड़ा किया और जिन्हें प्यार करके मां, मां कहता तब अरे यह मरकर कहाँ गये बापू ! तुमने देखा है ? आहाहा !

पिताजी ! ऐसे तुम बापूजी, बापूजी करते भाई, कहाँ गये बापू। आहाहाहाहा ! ऐसे तो अनंत मां-बाप किये। आहाहा !

एक (लड़का) नीमपत्ती तोड़ता था, तब कहा कि भाई तुम छोड़ दो बापू, यह तुम्हारे पूर्व (भव) के बहुत मां-बाप इसमें बैठे हैं। यह नीम, बाबूलालजी ! यह नीम पत्ता है न ? एक-एक पत्तों में असंख्य जीव है हाँ ! एक पत्ते में असंख्य जीव हैं, एक टुकड़े में असंख्य। आहाहा ! कहा भाई ! तुम इसे तोड़ो नहीं रहने दो। बापू ! तुम्हें खबर नहीं। तुम्हारे असंख्य बहुत भवों के मां-बाप मरकर के इसमें बैठे है स्थित होंगे। तुम जिसे मां, मां कहता और मम्मी, मम्मी कहता था, साड़ी पकड़ता था, साड़ी क्या कहते हैं ? साड़ी पकड़कर इसप्रकार खड़ा रहता, मां, मां, कहता था। आहाहा ! अरे ! भाई तुमने विचार किया नहीं। आहाहाहा ! ऐसे अनंतजीव कहीं भटकते-भटकते कहाँ परिभ्रमण करते होंगे। बापू तुझे (भव) सुधारने का रस्ता मिला है, सुधार लो - ऐसा समय पुनः नहीं मिलेगा। आहाहा ! यह ही करना है।

छः ढाला में आता है न ? लाख बात की बात यही निश्चय उर लाओ, छः ढाला में आता न भाई ! लाख बात, लाख नहीं अपितु अनंत बात, अनंत बात की बात, निश्चय उर आनो, छोड़ी सकल जग छंद-कंद निज आतम ध्याओ। आहाहाहाहा ! छः ढाला में आता है। गागर में सागर भर दिया है। छः ढाला में बहुत... संत और उस समय के पण्डित भी बहुत अच्छे, टोडरमल, बनारसीदास, भागचन्द्रजी यह दौलतराम पण्डित तो पण्डित ही, अभी तो सभी गड़बड़ हो गई। आहाहा !

भाई, तुम्हें दिखावा करना है कि देखनेवाले को देखना है ? आहाहा ! दुनियाँ में प्रदर्शन करना है ? कि हमको कोई पहचाने कि हमें कोई बड़ा माने हम कुछ है हमारी गिनती दुनियाँ में हो, भाई ! तुम्हें वहाँ (क्या) करना है ? आहाहा ! कि देखनेवाले को देखना है ? देखनेवाला तीनलोक का नाथ विराजित है प्रभु ! उसे जो ज्ञान जानता है उस ज्ञान को श्रुतकेवली कहा जाता है। आहाहाहा ! सभी पढ़ा तुमने... आहाहा !

तिर्यंच समकिति को भी जिस ज्ञान से आत्मा जानने में आता उस ज्ञान को श्रुतकेवली कि व्यवहार श्रुतकेवली कहते हैं, बापू तुम्हें जो जानना था वह जाना, तुम्हारे ज्ञान में यह चीज आ गई। आहाहा ! तीनलोक का नाथ, पूर्णानंद का नाथ प्रभु उसको तुमने ज्ञान से जाना, उस ज्ञान में और आत्मा में तत्रूप संबंध है, इसलिये उस ज्ञान को ही हम व्यवहार श्रुतकेवली कहते हैं। वह भी सर्वश्रुतरूपी व्यवहार श्रुतकेवली कहे जाते हैं। आहाहा ! गजब बात !! समझ में आया ?

थोड़ा भी परंतु सत्य होना चाहिए, लम्बी बड़ी बातो में सत्य... आहाहा ! जिसमें

से जन्म-मरण का अंत नहीं आये प्रभु ! यह क्या वस्तु है ? जिसमें जन्म-मरण अनंत-अनंत किये। आहाहा ! और जिसे मिथ्याभाव मौजूद है, इस मिथ्यात्व में तो अनंत जन्म-मरण करने का गर्भ स्थित है। आहाहा ! यहाँ तो जो कहीं आत्मा को जाननेवाला ज्ञान है। आहाहा ! उस ज्ञान को, भगवान (आत्मा को) जानने लायक ज्ञान इसलिये उसे संपूर्ण कहा और श्रुतकेवली कहा। आहाहा ! भाई तुमने सब जाना बापू, तुम्हें जो जानने योग्य वस्तु उसका तुमने ज्ञान किया उस ज्ञान को सर्व ज्ञान कहते हैं और `ज्ञान सो आत्मा' इतना भेद है इसलिये इस ज्ञान को व्यवहार श्रुतकेवली कहते हैं। आहाहा ! बापू ऐसी बात मिलना मुश्किल है भाई ! आहाहा ! बहुत मुश्किल हो गया बापू ! आहाहा ! परम सत्य का प्रवाह तो यह है। आहाहा !

जो सर्व श्रुतज्ञान को जानता है। उसमें क्या था ? केवल शुद्ध आत्मा को जानते हैं - ऐसा था। है न ? श्रुत से केवल शुद्धआत्मा को जानते हैं - ऐसा था, और इसमें सर्व श्रुतज्ञान को जानते है फर्क है। आहाहा ! समझ में आया ? संतों की वाणी इतनी गंभीर है, उसके लिये बहुत अभ्यास चाहिए और समय निकलना चाहिए बापू ! आहा ! और वह अपने हित के लिये है न ?

इस बात की विशेषता क्या हुई ? कि जो आत्मा वस्तु है यह ज्ञानादिक अनंत गुणों का एकरूप हैं। तब ऐसे ज्ञान को ऐसी वस्तु को जानले यह ज्ञान तो अभेद हो गया, अर्थात श्रुतज्ञान, निश्चयश्रुत केवली हो गया। परंतु जो ज्ञान वस्तु को जाननेवाला है, उसे जानने को गया नहीं, अभेद हुआ नहीं, यह जाननेवाला ज्ञान है उसका (एवं) आत्मा का और आत्मा के साथ इस ज्ञान का संबंध है। इस ज्ञान का राग(या) व्यवहार रत्नत्रय के साथ कि देव-शास्त्र-गुरु कि अन्य अजीव तत्त्व के साथ ज्ञान का - ऐसा संबंध नहीं। आहाहा ! ज्ञान का इस आत्मा के साथ तादात्म्य संबंध है, इसलिये ज्ञान को सर्वज्ञान कहा, और उस ज्ञान को सर्व श्रुतकेवली को व्यवहार कहा जाता है। आहाहाहा ! कल दोपहर की बात थी कि अधिकार अच्छा आया था। बाबूलालजी ! दोपहर की चीज में यह अधिकार बहुत अच्छा आया था कल, मुनिपना, केवली... यह पर्याय आत्मा में नहीं। आहाहा ! आज आयेगा विशेष दोपहर को। आहाहा !

जो सर्व श्रुतज्ञान को जानता है, भाषा बदल गई ? पहले - ऐसा था, केवल शुद्ध आत्मा को जानता है - ऐसा था, वह निश्चय, और यहाँ सर्व श्रुतज्ञान को जानता है। समझ में आया ? **सर्वश्रुतज्ञान** (**द्वादशांग**) **को जानता है। सर्व कहने का आशय तो त्रिकाली को जानता है - ऐसा जो ज्ञान, है अभी भिन्न परंतु उसे व्यवहार श्रुतकेवली उसे जो जानता है उसे व्यवहार श्रुतकेवली कहते हैं।** आहाहाहा ! वह व्यवहार है।

देखा ? अंतर के भावश्रुतज्ञान द्वारा अनुभव में चला गया द्रव्य में, द्रव्य के अनुभव में अभेद ज्ञान हुआ यह तो परमार्थ से सत्य ज्ञान, श्रुतकेवली है। सच्चा श्रुतकेवली परमार्थ से श्रुतकेवली। आहाहा ! क्योंकि इसमें से तो उसको केवलज्ञान होना है।

भगवान (आत्मा) का अनुभव हुआ, जिस ज्ञान द्वारा अनुभव किया, यह भगवान के ज्ञानमें चाहे अभी इतना ज्ञान आया परंतु उसे तो निश्चय श्रुतकेवली कहा इसलिये इसे परमार्थ से केवलज्ञान अल्पकाल में होनेवाला है, वह द्रव्यमें से होनेवाला है। आहाहाहा ! समझ में आया ? जिसमें से केवलज्ञान होनेवाला है, उसे जो जाने अनुभव करे इसलिये वह निश्चय श्रुतकेवली परमार्थ से है। आहाहा ! गंभीर बात गंभीर बात !!

दिगम्बर संतों के सिद्धांत गजब है, कहीं मिले - ऐसा नहीं। आहाहा ! लोगों को दुःख हो। अरे तब हमारा संप्रदाय गलत ? बापू ! भाई, यह हित की बात है। जिसमें अहित हो वह वस्तु क्या ? आहाहा ! जिससे जन्म-मरण मिटते हैं, आहाहा ! जिसमें जन्म-मरण और जन्म-मरण का भाव नहीं, अरे जिसमें मोक्षमार्ग की पर्याय भी नहीं। आहाहाहा ! ऐसे ज्ञायकभाव को जिसने जाना, यह तो निश्चय श्रुतकेवली है। आहाहा ! और उन्हें केवलज्ञान तो अल्पकाल में होनेवाला ही है, परंतु उसे जाननेवाला जो ज्ञान है, उस जाननेवाले ज्ञान को भी हम सर्वश्रुत कहते हैं... संत महाव्रतधारी, सच्चे महाव्रतधारी हो, आहाहाहा ! आत्मज्ञान बिना जितने महाव्रतधारी है यह सभी तो मिथ्या है। आहाहा ! यह सत्य महाव्रतधारी ऐसी पुकार करते हैं कि प्रभु तुम्हारे आत्मा को जो जाननेवाला, जो ज्ञान है न ? आहाहा ! हम सत्य महाव्रतधारी कहते हैं, ऋषीश्वर कहते हैं - ऐसा आया था न, ऋषीश्वर - ऐसा गाथा में आया था, ऋषी के ईश्वर अर्थात गणधर भी - ऐसा कहते हैं। आहाहाहा ! यह भविष्य के ईश्वर परमात्मा हैं, जिनेश्वर देव यह भी - ऐसा कहते हैं।

जिसने ज्ञान से सीधे, भाव से आत्मा का अनुभव किया तब परमार्थ श्रुतकेवली है, परंतु उसको जाननेवाला ज्ञान है उसे `सर्व' कहते हैं, उसे व्यवहार श्रुतकेवली कहते हैं। आहाहा ! कारण कि उस ज्ञान का संबंध आत्मा के साथ है। उस ज्ञान का संबंध कहीं... व्यवहार रत्नत्रय के राग के साथ भी जिसका संबंध नहीं। आहाहा !

क्योंकि राग तो अज्ञान है। अज्ञान अर्थात ? उसमें ज्ञान का अंश नहीं। विपरीत ज्ञान - ऐसा नहीं कहना परंतु जो दया, दान, व्रत या व्यवहार रत्नत्रय का विकल्प है राग, उसमें ज्ञान का अंश नहीं क्योंकि राग जानता नहीं, राग स्वयं को जानता नहीं, उसीप्रकार साथ में चैतन्य है उसे जानता नहीं, परंतु वह राग चैतन्य द्वारा जानने में आता है इसलिये अचेतन है। आहाहाहाहा !

`यहाँ दो पक्ष लेकर परीक्षा करते है' अब वह ज्ञान को जाने उसे व्यवहार

श्रुतकेवली कहा और सबको जाननेवाला कहा। अब उसका थोड़ा स्पष्टीकरण करते हैं। यह ज्ञान जो भावश्रुत है, उस ज्ञान को सर्वश्रुत कहा और उस ज्ञान को व्यवहार श्रुतकेवली कहा, कारण कि ज्ञान ग्रहण किया नहीं अनुभव में गया नहीं, अभी भिन्न रहकर बात करते हैं, उस ज्ञान को व्यवहार श्रुतकेवली क्यों कहा ? यहाँ दो पक्ष लेकर परीक्षा करते हैं। ऊपर कहा हुआ **`सर्व ज्ञान आत्मा है कि अनात्मा ?`** जो ज्ञान आत्मा को जाननेवाला है वह ज्ञान आत्मा है कि यह अनात्मा ? आहाहा ! यह कोर्ट में जैसे कानून बोलता है इसीप्रकार यह कानून बताते हैं। भगवान के घर के, कानून निकालते हैं, दलील निकालते हैं, यह सुन तो सही तुम एक बार प्रभु, भगवान आत्मा ! उसे जाननेवाला ज्ञान, उस ज्ञान को हमने `सर्व' कहा, और उसे व्यवहार श्रुतकेवली कहा, उसका कारण ? कि वह ज्ञान है... आहाहा ! है ? वह आत्मा है कि अनात्मा ? यह ज्ञान आत्मा के साथ संबंध रखता कि यह ज्ञान रागादिक अनात्मा के साथ संबंध रखता है ? समझ में आया ? आहाहाहा !

जो ऊपर कहा सर्व ज्ञान सर्व अर्थात व्यवहार श्रुतज्ञान, द्रव्यश्रुत नहीं, उसकी तो बात ही कहाँ यहाँ ? आहाहा ! ऊपर कहा `सर्व ज्ञान' शीर्षक में कहा न। सर्वश्रुतज्ञान यह ऊपर कहा हुआ सर्वज्ञान आत्मा है कि अनात्मा ? यदि अनात्मा का पक्ष लेने में आये, तब तो वह ठीक नहीं क्योंकि समस्त जो जड़रूप अनात्मा आकाशादि पांच द्रव्यों, आहाहा ! धर्मास्ति, अधर्मास्ति, पुद्गलपरमाणु, आकाश, काल, उसका ज्ञान के साथ तादात्म्य बनता ही नहीं। पांच जो जड़ पदार्थ हैं उस ज्ञान को और जड़ को एकरूपता होती ही नहीं। आहाहा ! समझ में आया ?

व्यवहारश्रुत को सर्वश्रुत क्यों कहा ? कि हम - ऐसा कहते हैं कि जो ज्ञान है वह तो आत्म स्वरूप है आत्मा के साथ संबंध रखनेवाला है कि अनात्म स्वरूप अनात्मा के साथ संबंध रखनेवाला है ? आहाहा ! बानियाँ व्यापारियों से ऐसे काम लेना सूक्ष्म तर्क के, उन्हें लेना पड़े बापू ! यह जन्म-मरण टालने का दूसरा कोई उपाय नहीं। चौराशी के अवतार एक-एक योनि में अनंत करे बापू उसकी उसे थकान लगी नहीं अभी ? आहाहा ! अरेरे मैं कहाँ गया और कहाँ भटका हूँ ? अन्जान क्षेत्र और अन्जान आत्मायें एवं अन्जान भाव और काल में। आहाहा ! भाई - ऐसा परिभ्रमण तुम अनंतकाल से करते आये हो, इस मिथ्यात्व को लेकर, उस मिथ्यात्व को टालने का यह एक उपाय (है), कि जो ज्ञान आगम से हुआ, उस ज्ञान का लक्ष्य भी छोड़ दो, और जिसने आत्मा के लक्ष्य से जो ज्ञान किया उस ज्ञान से आत्मा को अनुभवा, तब तो उसको निश्चय श्रुतकेवली (कहा) उसके भव का अभाव हो गया, भले एकाद दो भव हो परंतु भव का अभाव हो गया, परिभ्रमण उसका

है नहीं। आहाहाहाहा !

अब जिसको ज्ञान कहते हैं, और जो ज्ञान उसने जाना उस ज्ञान का सर्वपना और व्यवहार श्रुतकेवली कहा उसका कारण ? इस ज्ञान का संबंध आत्मा के साथ है कि इस ज्ञान का संबंध राग और जड़ के साथ है ? आहाहाहाहा ! यह तो भगवान के कोर्ट के कानून है, कोलेज है, भगवान की कोलेज है। आहाहा ! लोग फिर - ऐसा कहते हैं न यह तो अकेले निश्चय की सत्य की बात करते है - ऐसा कह कर निश्चयाभास है एकांत है, कहो प्रभु तुम ! तुम्हें खबर नहीं तुम्हें, यह तुम्हारी चीज क्या वस्तु है ? प्रभु तुम्हें खबर नहीं, अरे उसको जाननेवाले ज्ञान की भी तुम्हें खबर नहीं। आहाहा !

यह ज्ञान ही आत्मा को जान सकता है, यह राग से ज्ञान होता नहीं क्योंकि यह ज्ञान का संबंध आत्मा के साथ है, इस ज्ञान का संबंध राग के साथ नहीं, यह भी पांच द्रव्यों में परद्रव्य में जाता है राग, व्यवहाररत्नत्रय। आहाहा ! यह भावश्रुतज्ञान जो है उसको हमने सर्वश्रुत कहा इसने तो सभी को जाननेवाले को पकड़ा इसलिये और उसको हमने व्यवहारश्रुत कहा, भेदरूप तो यह ज्ञान का संबंध आत्मा के साथ है कि इस ज्ञान का संबंध राग के साथ है ? राग के (साथ) संबंध तो है नहीं राग में और शरीर में एवं वाणी में पुद्गल में और पुस्तक में शास्त्र में यह ज्ञान तो नहीं। आहाहा ! समझ में आया ? कहो छोटा भाई ! कलकत्ता में मिलना मुश्किल है। धूल मिले वहाँ पैसा... आहाहाहा !

अनात्मा का पक्ष लेने में आये तो वह ठीक नहीं। कारण कि समस्त जो जड़रूप अनात्मा आकाशादि पांच द्रव्यों वास्तव में तो इसमें तो व्यवहार रत्नत्रय का राग भी है न ? इसका भी व्यवहार श्रुतकेवली को एवं उसका कुछ संबंध नहीं कारण कि इस राग में ज्ञान नहीं राग का ज्ञान से संबंध नहीं। आहाहाहाहा ! इस ज्ञान का आत्मा से संबंध है, इसलिये इसे व्यवहारश्रुतकेवली कहा। इस ज्ञान का राग का संबंध है तब राग तो अनात्मा है, तब आत्मा का जो ज्ञान वह अनात्मा के साथ संबंध रखे - ऐसा कैसे हो सकता ? आहाहा ! समझ में आया ? सूक्ष्मबात है बापू !

यह तो तीनलोक के नाथ जिनेश्वर सर्वज्ञ। आहाहा ! जिसके पास एक भवावतारी इन्द्रो अर्धलोक के स्वामी, कुत्ते के बच्चों की तरह बैठ कर सुनते हैं। आहाहा ! समोशरण में प्रभु के समोशरण में। आहाहाहा ! जिनको सेवा में असंख्यदेव, एक-एक विमान में, ऐसे बत्तीसलाख विमान, उनका राजा इन्द्र आकर... आहाहा ! वह भगवान की वाणी सुने, यह वाणी कैसी हो भाई ! (अलौकिक) आहाहा ! यह भगवान कैसे हो और उनकी वाणी कैसी हो ? आहाहा ! उसकी विस्मयता अद्भुतता इसे

किसी दिन आयी नहीं। आहाहा ! यह बाहर के ठाठ बाठ... फोस्फरस हड्डी की तेज है, जैसे स्मशान में हड्डी की फोस्फरस चमकती चक चक इस प्रकार यह शरीर और पैसा एवं आबरु (इज्जत) बड़े महल। ओहोहो ! यह स्मशान के हड्डी की फोस्फरस है बापू ! तुम्हारी चीज कोई भिन्न है अंदर। आहाहा ! तुम्हारी वस्तु का ज्ञान करनेवाला ज्ञान को भी व्यवहार श्रुतकेवली कहते (है) आहाहा ! हाँ ! चाहे यह शास्त्रज्ञान उसे कम हो। आहाहाहा ! तिर्यंच का ज्ञान आत्मा को पकड़ता है उस ज्ञान को भी सर्वश्रुत व्यवहार श्रुतकेवली, आहाहा ! सिंह, सिंह हो जंगल का और समकिति हो, बाहर, ढाई द्वीप बाहर असंख्यात सिंह और असंख्यात मच्छ, असंख्यात बाघ सम्यग्दृष्टि है बाहर ढाई द्वीप बाहर। आहाहाहा ! वहाँ आत्मज्ञान पाते है। आहाहाहा ! उसके ज्ञान को भी व्यवहार श्रुतकेवली कहते हैं। तिर्यंच के ज्ञान को भी... आहाहाहाहा !

यहाँ तो थोड़ा बहुत जो बाहर का ज्ञान हो वहाँ अभिमान हो जाये कि हम जानते है और हम बड़े है और हम ऐसे है और अरे ! बापू ! भाई तुम्हें कहाँ जाना है तुम्हें ? आहाहा ! किसके साथ संबंध है ? उनका ज्ञान के साथ साधन बनता नहीं, क्योंकि उसमें ज्ञान की सिद्धि ही नहीं। इसलिये अन्य पक्ष का अभाव होने से ज्ञान आत्मा है। यह पक्ष सिद्ध होता है यह बात विशेष कहेंगें।

(प्रमाण वचन गुरुदेव !)